मेवाड़ में संस्कृतसाहित्य की जैन परम्परा

☐ डॉ० प्रेमसुमन जैन

मेवाड़ में प्राचीन समय से जो संस्कृत साहित्य लिखा गया है उसमें जैन मुनियों एवं गृहस्थ साहित्यकारों का विशेष योगदान है। प्राकृत एवं अपभ्रंश साहित्य के अतिरिक्त संस्कृत भाषा में भी जैनमुनियों ने पर्याप्त रचनायें लिखी हैं। मेवाड़ के संस्कृत साहित्य के इतिहास में प्रारम्भ में संस्कृत के शिलालेख एवं प्रशस्तियाँ ही प्राप्त होती हैं। काव्यग्रन्थों का प्रणयन मध्ययुग में अधिक हुआ है। उनकी पृष्ठभूमि में जैन मुनियों द्वारा प्रणीत संस्कृत के धर्म-ग्रन्थ रहे हैं। मेवाड़ में संस्कृत के स्वतन्त्र रूप से प्रथम ग्रन्थ लिखने का श्रेय ५वीं शताब्दी के जैन मुनि सिद्धसेन को है, जिनकी साहित्यसाधना का प्रमुख केन्द्र चित्तौड़ था। इन्होंने ३२ श्लोकों वाली २१ द्वात्रिंशिकाएँ लिखीं तथा न्यायावतार नामक जैन न्याय का ग्रन्थ संस्कृत में लिखा है।

जैन मुनियों की संस्कृत-साहित्य साधना का प्रमुख केन्द्र चित्तौड़ रहा है। आठवीं शताब्दी में यहाँ कई प्रमुख जैन कवियों ने संस्कृत में रचनाएँ लिखी हैं। आचार्य हरिभद्रसूरि की साधना-भूमि मेवाड़ रही है। उन्होंने चित्तौड़ में प्राचीन ग्रन्थों पर संस्कृत में कई टीकाएँ लिखी हैं। दशवैकालिकवृत्ति, ध्यानशतकवृत्ति एवं श्रावकप्रज्ञप्तिटीका उनकी महत्त्वपूर्ण रचनाएँ हैं। हरिभद्रसूरि ने संस्कृत में धर्मबिन्दु, अष्टकप्रकरण एवं षड्दर्शनसमुच्चय आदि मौलिक ग्रन्थ भी लिखे हैं। आचार्य हरिभद्रसूरि के समय से ही चित्तौड़ अन्य जैन मुनियों का भी काव्य-क्षेत्र रहा है। जैनाचार्य एलाचार्य एवं उनके शिष्य वीरसेन ने चित्तौड़ में संस्कृत साहित्य को पुष्ट किया है। वीरसेन की धवला-टीका संस्कृत का विशाल ग्रन्थ है। इनके शिष्य जिनसेन ने काव्य ग्रन्थों का प्रणयन भी संस्कृत में किया है। पार्श्वाभ्युदय, आदिपुराण इनकी प्रमुख रचनायें हैं। इन ग्रन्थों में संस्कृत काव्य और अलंकारों के कई नये प्रयोग देखने को मिलते हैं।

जिनसेन ने "पार्श्वाभ्युदय" में कालिदास के मेघदूत को आधार बनाया है। "मेघदूत" की एक पंक्ति लेकर तीन पंक्तियाँ अपनी लिखी हैं। फिर भी दृश्यों की छटा में कवि की मौलिकता झलकती है। इस तरह इस मेवाड़ी जैन कवि ने मेघदूत की परम्परा को आगे बढ़ाया है। जिनसेन ने आदिपुराण को महाभारत की शैली में लिखा है। उनकी इस रचना में आठवीं शताब्दी की सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति समायी हुई है। मेवाड़ के अन्य प्रतिष्ठित जैन संस्कृत कवियों में जिनवल्लभसूरि और उनके शिष्यों का प्रमुख स्थान है। इन्होंने १५-२० रचनाएँ संस्कृत में लिखी हैं, जिनके विषय धार्मिक होते हुए भी उनमें काव्यतत्त्वों की भरमार है। जिनवल्लभसूरि ने "शृंगारशतक" नामक एक ग्रन्थ लिखा है। जैन मुनियों के संस्कृत काव्य में यह अकेली शृंगारप्रधान रचना है। इस ग्रन्थ के एक पद्य में कवि कहता है कि नायिका की

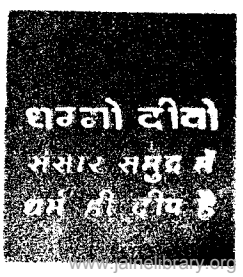

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दन्त-ज्योत्स्ना गगन-मंडल में फैलती हुई विश्व को अपनी धवलता से आप्लावित कर रही है। ऐसी स्थिति में अभिसार के लिए चन्द्रोदय की प्रतिक्षा क्यों की जाय ?

यथा—

मुग्धे दुग्धा दिवाशा रचयति तरला तैः कटाक्षच्छटाली,
दन्तज्योत्स्नाऽपि विश्वं विशदयति वियन् मण्डलं विफुरन्ती।
उत्फुल्लद्गंडपाली विपुलपरिलसत् पाणिमाडम्बरेण,
क्षिप्तेन्दौ कान्तमदाभिसार सरभसं किं तवेन्दुद्वयेन ॥७९॥

जिनवल्लभसूरि के शिष्य जिनदत्तसूरि ने भी संस्कृत में कई ग्रन्थ लिखे हैं। उनकी रचनाएँ भक्तिरस को प्रवाहित करती हैं।

चित्तौड़ के समान मेवाड़ प्रान्त का मांडलगढ़ भी जैन मुनियों एवं कवियों की साहित्य साधना का केन्द्र रहा है। तेरहवीं शताब्दी के महाकवि आशाधर मांडलगढ़ के मूलनिवासी थे। उनकी रचनाओं में अध्यात्मरहस्य, सागारधर्मामृत, अनगारधर्मामृत, जिनयज्ञकल्प आदि प्रमुख हैं। इन्होंने अपने संस्कृतग्रन्थों द्वारा मनुष्य के दैनिक आचरण को नैतिक बनाने में पूरा योगदान किया है। इनके ग्रन्थ जैन आचार के विश्वकोष हैं।

जैन मुनियों ने अपनी संस्कृतरचनाओं द्वारा मेवाड़ के साहित्यिक वातावरण को प्रभावशाली बनाया है। १५वीं शताब्दी में अनेक जैनाचार्य मेवाड़ में साहित्य-साधना में रत रहे हैं। इसके पूर्व जैन भट्टारकों ने मेवाड़ को संस्कृतसाहित्य से समृद्ध किया है। भट्टारक सकलकीर्ति, भुवनकीर्त्ति, ब्रह्मजिनदास, शुभचन्द्र एवं भट्टारक प्रभाचन्द्र की सैकड़ों रचनाएँ संस्कृत में मेवाड़ में लिखी गयी हैं। इन रचनाओं का काव्यात्मक महत्त्व तो है ही, मेवाड़ के इतिहास की सामग्री भी इसमें भरपूर है। इन भट्टारकों ने मेवाड़ में चित्तौड़, उदयपुर, ऋषभदेव आदि में जैन ग्रन्थ-भण्डारों की स्थापना कर मेवाड़ के संस्कृतसाहित्य को सुरक्षा प्रदान की है। इन भट्टारकों की साधनाभूमि चित्तौड़ एवं डूंगरपुर जिले के गाँव रहे हैं।

मेवाड़ के जैन मुनियों में भट्टारक सकलकीर्ति एक ऐसे कवि हैं, जिन्होंने २५-३० ग्रन्थ संस्कृत में लिखे हैं। इन्होंने पुराण, कथा, चरित्र एवं स्तोत्र आदि सभी विधाओं को अपनी संस्कृतरचनाओं से पुष्ट किया है। सकलकीर्ति का यह चिन्तन था कि साहित्य ऐसा होना चाहिये जो मनुष्य के जीवन को उन्नत करे। अपने "आदिपुराण" में वे कहते हैं कि जिस कथा के श्रवणमात्र से भव्य जीवों के समस्त राग-द्वेष, मोहादि दोषों का प्रक्षालन हो जाय और उनके स्थान पर सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र आदि गुण उत्पन्न हो जाएँ तथा दान-पूजा, ध्यान आदि की वृत्तियाँ बढ़ जाएँ वही शास्त्र वास्तविक है।

यथा—

येन श्रुतेन सभ्यानां रागद्वेषादयोऽखिलाः।
दोषा नश्यंति मोहेन सार्धं ज्ञानादयो गुणाः॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संवेगाद्याश्च वर्द्धन्ते जायते भावनारुचिः ।
दानपूजातपोध्यानव्रताद्या मोक्षवर्त्मसु ।।

स० १ श्लोक ३३-३६

सकलकीर्ति की रचनाओं से ज्ञात होता है कि उस समय संस्कृत सभी वर्ग के लोग समझते थे। समाज में संस्कृत के ग्रन्थों के पठन-पाठन की व्यवस्था थी। सकलकीर्ति कहते हैं कि मैंने आबाल-स्त्री-वृद्ध लोगों को सारभूत तत्त्वों का ज्ञान कराने के लिए संस्कृत भाषा में ग्रन्थ लिखे हैं।

ग्रन्थोऽत्रैव वरः पुराणकलितो बह्वीकथासंभृतः।
बालस्त्रीसुन्दरीणामतीवसुगमो गीर्वाणसद्भाषया ।।

उ० पु० १५-२१८

संस्कृत के इन ग्रन्थों में जैनमुनियों ने यद्यपि परम्परागत महापुरुषों को ही चरित्रनायक बनाया है, किन्तु अपने समय के शासकों एवं सज्जन पुरुषों का स्मरण भी इन ग्रन्थों में किया गया है। जैन मुनियों का राजवंशों से भी सम्पर्क रहा है। इस दृष्टि से उनके ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण हैं।

राणकपुर और दिलवाड़ा भी जैन मुनियों की साहित्यसाधना के केन्द्र रहे हैं। मुनि सोमसुन्दर को राणकपुर में वाचकपद प्राप्त हुआ था। उन्होंने दिलवाड़ा में रहकर संस्कृत में कई रचनायें लिखी हैं। सोमदेववाचक इनके शिष्य थे। उन्हें महाराणा कुम्भा ने कविराज की उपाधि प्रदान की थी। महाराणा कुम्भा के ही समकालीन महाकवि प्रतिष्ठासोम हुए हैं। इनकी रचनाओं "सोमसौभाग्यकाव्य" एवं "गुणरत्नाकर" प्रसिद्ध संस्कृत रचनाएँ हैं, जिनमें तत्कालीन मेवाड़ी संस्कृति की प्रामाणिक जानकारी मिलती है। १५वीं शताब्दी के जैनकवियों में महोपाध्याय चरित्ररत्नगणि एवं जिनहर्षगणि प्रमुख हैं, जिन्होंने चित्तौड़ में संस्कृतकाव्य लिखे हैं। जिनहर्षगणि का "वस्तुपालचरित" एक ऐतिहासिक काव्य है। मेवाड़ में वाग्भट्ट नामक एक जैन कवि हुए हैं, जिन्होंने छन्दशास्त्र और काव्यशास्त्र पर ग्रन्थ लिखे हैं।

स्वतन्त्र काव्यग्रन्थों के अतिरिक्ति जैन मुनियों ने मेवाड़ में रहते हुए संस्कृत में कई प्रशस्तियाँ भी लिखी हैं। १२वीं शताब्दी के जैनकवि रामकीर्त्ति ने चित्तौड़गढ़ में एक प्रशस्ति लिखी, जिसमें कुमारपाल के वहाँ आगमन का वर्णन है। आचार्य रत्नप्रभसूरि ने वि. सं. १३२२ में एक प्रशस्ति लिखी, जो चित्तौड़ के समीप घाघसे की बावड़ी में लगी हुई है। इन्हीं की दूसरी संस्कृतप्रशस्ति चीखा गाँव में लगी हुई है। इसमें १५ श्लोक हैं, जिनमें गुहिल वंशी बाप्पा वंशजों के पराक्रम का वर्णन है। गुणभद्र नामक जैन मुनि ने वि. सं. १२२६ में बिजौलिया के जैन मन्दिर की प्रशस्ति लिखी थी। १५वीं शताब्दी में चारित्ररत्नगणि ने महावीर प्रशस्ति लिखी है, सरस्वतीस्तुति के उपर्यन्त मेवाड़ देश का सुन्दर वर्णन किया गया है। ऐतिहासिक दृष्टि से भी इन प्रशस्तियों का विशेष महत्त्व है।

इस प्रकार मेवाड़ में ५वीं शताब्दी से १५-१६वीं शताब्दी तक जैन मुनियों द्वारा संस्कृत भाषा में काव्यमय रचनाएँ लिखी जाती रही हैं। आधुनिक युग में भी मेवाड़ के कई जैन मुनियों ने संस्कृत में काव्य लिखे हैं। इन मुनियों की संस्कृत रचनाओं को एकत्र कर यदि प्रकाशित किया जाय तो संस्कृतकाव्य के इतिहास की समृद्धि तो होगी ही, उससे मेवाड़ की संस्कृति के कई पक्ष भी उजागर हो सकते हैं।

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन मुनियों के इन संस्कृतग्रन्थों में मेवाड़ के ग्रामीण जीवन की झाँकी प्राप्त होती है। ये मुनि पैदल ही चलते थे। अतः इनका सम्पर्क समाज के हर वर्ग से बना रहता था। उन्होंने जो कुछ भी समाज में देखा उसका चित्रण अपने ग्रन्थों में किया है। इस दृष्टि से मेवाड़ के रीति-रिवाज, पहनावा, पर्व-उत्सव एवं रहन-सहन की प्रामाणिक जानकारी के लिये जैन मुनियों द्वारा प्रणीत संस्कृतसाहित्य का अध्ययन उपयोगी साबित होगा। इन कवियों की दृष्टि बड़ी सूक्ष्म रही है। एक कवि ने अपने ग्रन्थ में एक वृद्ध व्यक्ति का चित्रण करते हुए कहा है कि बुढ़ापे में व्यक्ति झुककर जमीन को देखते हुए चलने लगता है तब ऐसा प्रतीत होता है मानो वह अपने खोये हुए बचपन और यौवन को धरती में खोजता हुआ चल रहा है। यथा—

असंभृतं मण्डनमंगयष्टेर्नष्टं वने मे यौवनरत्नमेतत्।
इतीव वृद्धो नतपूर्वकायः पश्यन्नधोऽधो भुवि बम्भ्रमीति ॥

धर्म. ४/५९

जैन मुनियों के द्वारा प्रणीत संस्कृतसाहित्य की एक विशेषता यह भी है कि पीढ़ियों तक वे संस्कृतकाव्य-रचना में संलग्न रहते थे। एक आचार्य के समीप रहने वाले प्रायः सभी जैनमुनि संस्कृत पढ़ते थे और काव्य-रचना करने में अपना समय व्यतीत करते थे। काव्य की श्रेष्ठता के सम्बन्ध में भी उनके विचार थे कि काव्य वही श्रेष्ठ है जिसके आलोक से अन्य कवि भी कविता का प्रणयन करने में समर्थ हो सकें। जिस प्रकार एक चन्दन वृक्ष की गन्ध के सम्पर्क में समस्त वन के वृक्ष चन्दन की सुगन्ध वाले बन जाते हैं। यथा—

जयन्ति ते सत्कवयो यदुक्त्याः बाला अपि स्युः कविताप्रवीणाः।
श्रीखंडवासेन कृताधिवासः श्रीखंडतां यान्त्यपरेऽपि वृक्षाः ॥

इस भावना के कारण मेवाड़ में संस्कृतकाव्य-सृजन के कई केन्द्र स्थापित हो गये थे। जिनका संचालन जैन मुनि करते थे। चित्तौड़ का केन्द्र वीरसेन और हरिभद्रसूरि ने पुष्ट किया तो दिलवाड़ा के संस्कृत कविराज सोमदेव वाचक थे। डूंगरपुर और वागड़ क्षेत्र को सकलकीर्त्ति तथा उनके शिष्यों ने अपनी रचनाओं से समृद्ध किया था तो गुणभद्रमुनि ने बिजौलिया को अपने संस्कृतकाव्य से अलंकृत किया था। इस तरह मेवाड़ का कोई क्षेत्र जैन मुनियों की संस्कृतकविता से अछूता नहीं है। आवश्यकता इस क्षेत्र के ग्रन्थ भण्डारों में पड़े हुए काव्य-रत्नों को खोज निकालने की है।

विशेष अध्ययन के लिये सन्दर्भग्रन्थ

१. मेवाड़ का संस्कृत साहित्य को योगदान (थीसिस) १९६९, डॉ० चन्द्रशेखर पुरोहित।
२. भट्टारक सकलकीर्ति—एक अध्ययन (थीसिस), १९७६, डॉ० बिहारीलाल जैन।
३. समदर्शी हरिभद्रसूरि, बांठिया
४. जिनवल्लभसूरि का कृतित्व एवं व्यक्तित्व (थीसिस)—म० विनयसागर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

५. तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्यपरम्परा—डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री, भाग ४
६. भट्टारकसम्प्रदाय, डॉ० विद्याधर जौहरापुरकर
७. महाराणा कुम्भा, रामवल्लभ सोमानी
८. राजस्थान के जैनग्रन्थभण्डारों की सूचियाँ (भाग १-५), डॉ० के० सी० कासलीवाल
९. शोध-पत्रिका, उदयपुर, अंक २-३, भाग ६,
१०. वरदा, वर्ष ५, अंक ३
११. राजस्थानी साहित्य की गौरवपूर्ण परम्परा—अगरचन्द नाहटा
१२. 'जिनवाणी' विशेषांक (जैन संस्कृति और राजस्थान), १९७५
१३. राजस्थान का जैन साहित्य, जयपुर १९७६
१४. संस्कृतकाव्य के विकास में जैनकवियों का योगदान, डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री

२९, सुन्दरवास, उदयपुर-३१३००१

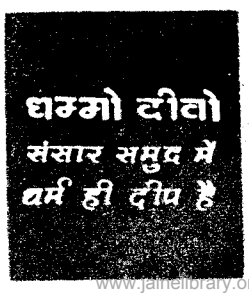

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org